कौशलेन्द्र

राजा–रानी आये हैं

सिर पर उजली कलैंगी बांधे
धुली–धुली पोशाकें पहने
राजा–रानी
गांव हमारे
आये हैं हमसे कुछ कहने

छींटा कसने गढ़े गांव के,
कीचड़–
धोने लगे पांव के, फटी जेब से
कुछ पाने को–
झांक रहे दिन अभाव के,

मलिन बस्तियों में
आई हैं–
फिर शहरी सुविधायें रहने

पहने हुये प्रेम की मुदरी
भेदभाव के रत्न जड़े हैं
इस आभा में हम अपनी
परछाई पकड़े ठगे खड़े हैं

राम करे–
हम ऐसी मुंदरी
अपनी अंगुली में ना पहने

जिन हाथों में ईंटा गारा
मांग रहे–
वह हाथ हमारा,
बदले में मीठा आश्वासन
देते हैं जो बेहद खारा,

कंधे–
सहलाकर कहते हैं
नहीं पड़ेंगे अब दुख सहने

('नये–पुराने' गीत अंक–5, 1999 से साभार)

अपने सुख–दुख

अपने–अपने सुख–दुख
केवल अपने हैं
भूमण्डलीकरण के सपने–सपने हैं

दांत गिर गये संस्कृतियों के
गाल फूलते हैं,
खतो–किताबत–के प्रसंग अब
पते झूलते हैं,

अपनी–अपनी ऊँचाई के नपने हैं
भूमण्डलीकरण के सपने–सपने हैं

साफ–धुली चादरें ओढ़कर
गुस्से सोये हैं,
बीता भर की शरहद में भी
कांटे बोये हैं,

बन्द रफ्तनी सीमाओं पर तेग बने हैं,
भूमण्डलीकरण की सपने–सपने हैं

पश्चिम से पछुआ बहती है
पूरब से पुरवाई,
इन सबका ऐसे बहना
सब लगता है हवा–हवाई,

अपनी–अपनी माटी के–हर लोग बने हैं
भूमण्डलीकरण के सपने–सपने हैं।

सम्पर्क–
जवाहर लाल नेहरू कालेज
जारी, इलाहाबाद (उ.प्र.)